

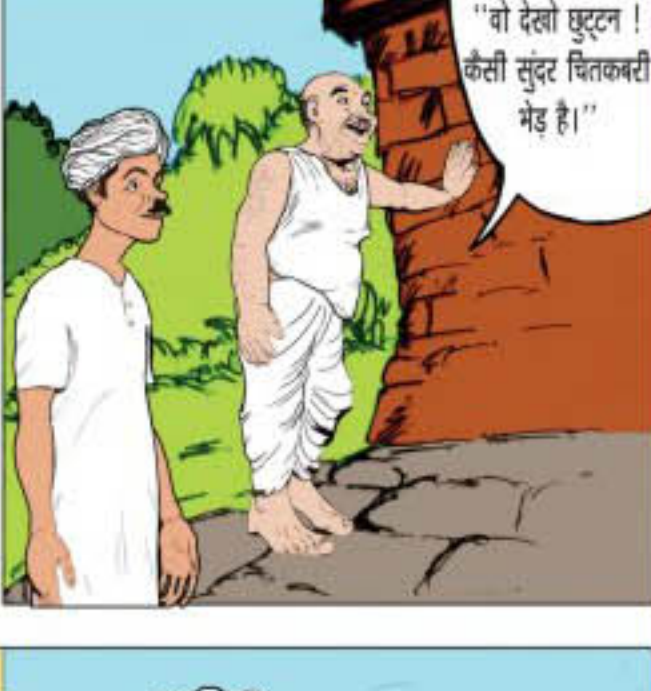
“दो बातूनी”
संपादन एवं पटकथा : प्रशांत बाजपेई
चित्ररचना : दमनजीत सिंह

गोपालपुर नाम का एक सुंदर गाँव था।

गाँव में दो बातूनी रहते थे। अलगू और छुट्टन। दोनों की ही एक आदत थी, अपनी बोले जाना दूसरे की ना सुनना।



दोनों की दूर की नजर कमजोर थी। पर वो मानने को तैयार न थे। उरता एक दूसरे को नीचा दिखाने में लगे रहते थे।



“वो देखा छुट्टन !
कैसी सुंदर चितकवरी
भेड़ है।”



“वाह रे सूरदास !
अरे, बकरी है, बकरी।”

देवपुत्र



कुछ पलों बाद

?

सितम्बर २०११



“हूँ SSS...!”



आए दिन दोनों लड़ते रहते। ऐसे ही एक दिन...

“मैं कहता हूँ अपनी
आँखों का इलाज
करवाओ।”

“मेरी तो आँखें अच्छी भली
हैं, और तुमसे तो सौ गुना
तेज है।”



तो हो जाए
परीक्षा ?

हाँ-हाँ, हो
जाए।
उरते किससे
हो ?



तो तय हो गया कि परीक्षा करके मालूम कर लिया जाए कि किसकी आँखें तेज हैं। दोनों ही अवसर ढूँढ रहे थे। एक दिन ...

सुनते हो ? परसों तालाब
के किनारे बरगद के नीचे
मूर्ति लग रही है।

अच्छा ! किसकी मूर्ति ?



वो तो पता नहीं। पर.....
.....हो जाए परीक्षा ?

परीक्षा ? वो कैसे ?



मूर्ति के बारे में न तुम जानते हो न मैं। परसों हम तालाब के पास किसी पेड़ पर चढ़कर बैठ जाएंगे, और वहीं से मूर्ति की बनावट के बारे में एक दूसरे को बताएंगे। देखते हैं, कौन सही-सही बता पाता है।

बिल्कुल ठीक। बात पक्की रही।

देवपुत्र

(१२)

सितम्बर २०११

दोनों परीक्षा के दिन मिलने का समय तय करके चल दिए। पर दोनों ही के मन में चोर था।



उसी दिन दोनों अलग अलग समय पर छुपते-छुपाते, उस मूर्तिकार के घर पहुँचे जिसने मूर्ति बनाई थी, ताकि पहले से ही मूर्ति की बारीकियाँ सुनकर याद कर लें, और बेईमानी से ही सही पर जीत जाएँ।



मूर्तिकार एक विनोदप्रिय व्यक्ति था, और इन दोनों की आदतों से अच्छी तरह परिचित भी था। मजा लेने के लिए उसने एक चाल चली। मूर्ति घोड़े पर सवार एक घोड़ा की थी। उसने अलगू को घोड़ा के बारे में बताया और छुट्टन को घोड़े के बारे में। अलगू और छुट्टन दोनों ही खुशी-खुशी घर लौटे।



देवपुत्र



(१३)

सितम्बर २०११

आखिरकार परीक्षा का दिन आ पहुँचा। मन में जीत का विश्वास लिए अलगू और छुट्टन ठीक समय पर पहुँच गए और एक पेड़ पर जा बैठे। बातें होने लगी।



मुझे तो एक घोड़ा दिखाई पड़ता है, जो पिछले पैरों पर खड़ा है।

मुझे तो घोड़ा दिखाई पड़ता है, दोनों हाथों में तलवार लिए।

वे तो तुम्हारे हाल हैं। घोड़ा तुम्हें आदमी दिखाई देता है।

तुम आदमी और घोड़े में अंतर नहीं कर सकते क्या ?



कहस होने लगी। दोनों को अपनी जीत का मरोसा था। अंततः



अच्छा - अच्छा ! चलो किसी भले आदमी से पूछ लें।

हाँ-हाँ, पूछ लो



और फिर...

क्यों माई ! वो तालाब किनारे जो मूर्ति लगी है वो घोड़े की है वा आदमी की ? कृपया बता दो ताकि मेरे मित्र को विश्वास आ जाए।

हाँ-हाँ, बताओ।



मूर्ति ? मूर्ति। आज कहीं लग पाई। मूर्तिकार बीमार पड़ गया है।



मूर्ति
अगले सप्ताह
लगेगी।

?



दोनों को सबक मिल गया था। मन मुट्ठा दूर हो गया। अपनी मूर्खता पर दोनों खिल खिलकर हँस पड़े।

“हा हा हा हा.....
हो हो हो SSS.....”

देवपुत्र

सितम्बर २०११